International Recognized Double-Blind Peer Reviewed Multidisciplinary Research Journal
Review Of Research
ISSN 2249-894X **Impact Factor :3.1402(UIF)**
Volume - 4 | Issue - 9 | June - 2015 Available online at www.lbp.world

जनसंख्या नियंत्रण के परिप्रेक्ष्य में परिवार नियोजन के जैव–संस्कृतिक कारकों का अध्ययन

अंजनी कुमारी
शोधार्थी, गृहविज्ञान विभाग, ल.ना. मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा.

Short Profile

Anjani Kumari is a Researcher at Department of Home Science in L. N. Mithila University, Darbhanga.

सारांश :
सभ्यता एवं संस्कृति के जनक तथा प्राकृतिक संसाधनों के उत्पादनकर्ता, उपभोक्ता एवं संरक्षक के रूप में मानव स्वतः एक प्रमुख संसाधन हैं। इसलिए जनसंख्या संसाधन को मानव संसाधन की संज्ञा प्रदान की गयी है। राष्ट्रीय विकास मानव के आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं बौद्धिक विकास का प्रतिफल होता है। अतः राष्ट्रीय विकास की अवधारणा में मानव संसाधन, विकास अति आवश्यक हो जाता है। जनसख्या ससांधन एवं अन्य ससांधनों के विकास एवं उसके लाभकारी उपयोग के लिए परस्पर संतुलित विकास की नीति निर्धारित होने से किसी भी क्षेत्र के सम्यक् विकास को गति प्रदान की जा सकती है। किसी भी क्षेत्र में विकास की अवधारणा तथा मानव संसाधन एवं मानवीय तकनीक के बीच सामंजस्य स्थापित करने के लिए जनसंख्या संसाधन पर नियंत्रण एवं उसका सफल नियोजन आवश्यक है।

प्रस्तावना :

जनसंख्या नियोजन का मुख्य लक्ष्य न सिर्फ मानव की संख्या को कम, अधिक या स्थिर रखना होता है अपितु विश्व की बढ़ती हुई जनसंख्या के बड़े भाग के लोगों के जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि का प्रयास करना होता है (अग्रवाल 1978)। भारत अत्यधिक जनसंख्या वाला राष्ट्र है। यहाँ पर मानव संसाधन की अति वृद्धि राष्ट्रीय सरकार को जनसंख्या नियोजन एवं योजनाबद्ध, आर्थिक विकास कार्यक्रमों को संचालित करने का आमंत्रण देती है। जनसंख्या संसाधन

नियोजन के अन्तर्गत इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि क्षेत्रीय सन्दर्भ में मानव शक्ति एवं उपलब्ध समस्त संसाधनों के बीच सन्तुलन बना रहे। वर्तमान जनसंख्या वृद्धि को देखते हुए कहा जा रहा है कि वर्ष 2050 तक भारत की जनसंख्या चीन से अधिक हो जाएगी जिससे समाज में बवण्डर जैसी स्थिति का निर्माण हो जाएगा, जो क्षेत्र के अंधकारमय भविष्य की ओर इंगित करता है। अतः वृद्धि–विनाश के चक्रों से बचने के लिए हमें पूरे विश्व स्तर पर स्थायित्व स्थापित करने के उपाय करने होंगे। ऐसी परिस्थिति में किसी संकट की स्थिति के उत्पन्न होने से पूर्व क्षेत्र में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति को इस ओर जागरूक होकर परिवार कल्याण एवं परिवार नियोजन जैसे महत्वपूर्ण क्रिया कलापों का क्रियान्वयन करना होगा।

मानव के अस्तित्व एवं उसकी उन्नति के लिए प्राकृतिक संसाधनों के विकास एवं पुर्नचक्रण की महती आवश्यक है। साथ ही साथ प्राकृतिक संसाधनों के विकास करने में सक्षम मानव संसाधनों का विकास संरक्षण एवं नियोजन भी उतना ही आवश्यक है। भारत में जनसंख्या नियोजन पर बल देते हुए के0 एन0 दास ने अपना मत व्यक्त किया है कि जनसंख्या संसाधन, अन्य प्राकृतिक संसाधनों की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण एवं बहुमुल्य है किन्तु वर्तमान समय में देश में यह संसाधन अविकसित अवस्था में है। अतः भारत ही नहीं, बल्कि सम्पूर्ण विश्व में जनसंख्या संसाधन का समुचित सर्वेक्षण, संरक्षण एवं नियोजन अति आवश्यक है। जनसंख्या नियोजन मात्र विकास की समस्त सुविधाओं को प्रदान करने से ही नहीं किया जा सकता। इसके स्थायी समाधान हेतु परिवार नियोजन एवं संतति निग्रह के सूत्र पर अमल करना होगा।

परिवार कल्याण कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य प्राथमिक आधार पर सुनियोजित एवं उत्तम मातृत्व उपलब्ध कराना है जिसके लिए लोगों को नियोजित परिवार के लिए प्रोत्साहित करना है। परिवार नियोजन परिवार कल्याण की सुदृढ़ नींव है। एक सम्पन्न परिवार अनियोजित पारिवारिक वृद्धि के कारण विपन्न स्थिति में हो सकता है। अतः आर्थिक समृद्धि से कहीं अधिक परिवार परिसीमन की बात जरूरी है। आपात काल (वर्ष 1977) में परिवार नियोजन की ज्यादतियों के कारण मार्च 1977 के लोक सभा चुनाव में कांग्रेस सरकार की हार हुई और जनता सरकार सत्ता में आयी। जनता सरकार द्वारा परिवार नियोजन कार्यक्रम का नाम बदलकर राष्ट्रीय परिवार कल्याण कार्यक्रम रखा गया, जिसका संचालन राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संस्थान (एन0 आई0 एच0 एफ0 डब्ल्यू0) के निर्देशन में सम्पन्न हुआ।

परिवार नियोजन वर्तमान समय का एक सर्वप्रचलित एवं बहुचर्चित शब्द है जो परिवार एवं नियोजन–दो शब्दों से बना है। परिवार को यौन सम्बन्धों पर आधारित एक छोटे समूह के रूप में परिभाषित किया जाता है, जिसमें सन्तानोत्पत्ति एवं उनके पालन–पोषण की व्यवस्था रहती है (भारत 1986)। नियोजन से तात्पर्य योजनाबद्ध रूप से कार्य करना है। नियोजन एक निश्चित कालावधि में सुनिश्चित एवं सुपरिभाषित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए योजनाबद्ध एवं विवेकपूर्ण कार्यक्रम है (वात्तल 1916)। इस प्रकार परिवार नियोजन का अर्थ साधनों के अनुरूप परिवार के आकार को सीमित रखने से है। इच्छित संतान उत्पन्न करके अपने उपलब्ध आर्थिक साधनों के अनुरूप परिवार को सीमित एवं समन्वित रखना ही परिवार नियोजन है।

व्यापक अर्थों में परिवार नियोजन एक कल्याणकारी योजना है जिसका उद्देश्य व्यक्ति की उन्नति, परिवार की भलाई, समाज का सुधार तथा राष्ट्र की उन्नति करना है (कार्वे 1951)। परिवार कल्याण के अन्तर्गत केवल शिशु जन्म में उचित अन्तराल एवं जन्म पर रोक लगाना ही सम्मिलित नहीं रहती, बल्कि माता व बाल स्वास्थ्य देखरेख, बंधता की चिकित्सा, विवाह, मार्गदर्शन एवं सलाह, विवाह पूर्व सलाह व शिक्षा, गृह अर्थशास्त्र एवं पोषण भी सम्मिलित है अर्थात् परिवार कल्याण का अर्थ केवल जन्मों के नियंत्रण तक सीमित न होकर समस्त परिवार के स्वास्थ्य की देखभाल करके उसका कल्याण करना है। इस प्रकार परिवार कल्याण कार्यक्रमों के अन्तर्गत प्रजनन वृद्धि विकास, गर्भ निरोधक कृत्रिम साधनों का प्रयोग, गर्भपात, बच्चों की संख्या, उनके जन्म के मध्य अन्तर, आयु में अन्तर, माता–पिता एवं शिशु का स्वास्थ्य, चिकित्सा एवं परिवार का आकार, पोषण, शिक्षा और उन कार्यक्रमों का समावेश रहता है जो परिवार की पूरी इकाई और उसके अनेक सदस्यों से सम्बन्धित रहते हैं। इनके कार्यक्रमों को परिवार कल्याण कार्यक्रम कहते हैं।

मानवीय समस्याओं में जनसंख्या की समस्या इस कारण मौलिक एवं प्रधान मानी जाती है क्योंकि अत्यधिक जनसंख्या न केवल व्यक्ति व परिवार को परन्तु क्षेत्र, जनपद, राज्य एवं राष्ट्र को भी हानि पहुँचाती है। जनसंख्या का अनियंत्रित विस्फोट व्यक्ति की योग्यता, स्वास्थ्य एवं प्रसन्नता को, परिवार के आर्थिक स्तर व उनके सदस्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति को, राष्ट्र के आर्थिक प्रगति व वैभव को तथा विश्व में शान्ति स्थापना को नकारात्मक रूप से प्रभावित करता है। इस प्रकार भारत में तीव्र जनसंख्या वृद्धि तथा परिवार के बढ़ते आकार को देखते हुए परिवार नियोजन

अत्यावश्यक है। 'परिवार नियोजन का तात्पर्य ऐसे परिवारों का निर्माण करना है जो आकार में छोटा एवं स्वस्थ्य हो तथा जीवन स्तर को ऊँचा उठाने या बनाये रखने में सहायक हो' (लाल 1997)।

पृथ्वी सीमित क्षमता वाली एक अन्तरिक्ष यान है। इसमें मनुष्य की पालन क्षमता की एक चरम सीमा है। यह सीमा एक ओर मानव समाज में विषमता तथा दूसरी ओर बड़ी और संश्लिष्ट प्रणालियों के प्रबन्ध की क्षमता की तीव्र वृद्धि के कारण पर्यावरण प्रदूषित कर रहा है और विभिन्न संसाधनों का तीव्र अवनयन हो रहा है। वस्तुतः जनसंख्या वृद्धि और प्रगति के परिप्रेक्ष्य में पार्थिव मण्डल का पारिस्थितिक सन्तुलन बिगड़ कर ऐसे विषम एवं जहरीले स्तर पर पहुँच रहा है जिसे परितंत्र संकट स्तर की संज्ञा दी जा सकती है। मानव की वृद्धि और उसकी आधुनिक प्राविधिकी पार्थिव सन्तुलन के प्राकृतिक चक्रों को तोड़ती–मड़ोरती और बाधित करती है। फलतः स्थिति इस स्तर पर पहुँची है कि प्रकृति अपने निश्चित चक्र को पुनर्चक्रित नहीं कर पा रही है जिससे प्रदूषण पग–पग पर पनप रहा है। उत्तरोत्तर बढ़ती मानव जनसंख्या विस्फोट जनित उत्पादन–उपयोग वृद्धि को प्रगति के रूप में परिभाषित करता हुआ मानव अपनी जननी पृथ्वी को विषाक्त बना रहा है। उसका ऑचल दिन–प्रतिदिन मृदा अपरदन, वन विनाश, जैव पुंज अवनयन, उत्पादनशीलता में ह्रास, जल–वायु एवं ध्वनि प्रदूषण, खनिज दोहन, भू–सांस्कृतिक स्वरूपों में स्खलन, विषाक्त गैसों के आवरण, आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, वैमनस्य, तनाव, संत्रास एवं शारीरिक व्याधियों से ग्रसित एवं मटमैला हो रहा है। यही कारण है कि शश्य–श्यामला भूमि एक दमघोटू परिवेश में परिवर्तित हो रही है। मानव अपना ही संहारक हो गया है। यदि जनसंख्या इसी प्रकार बढ़ती गयी तथा प्रगति एवं वृद्धि तीव्रतर होती गयी तो यह पृथ्वी इस बोझ को सहन नहीं कर पायेगी। फलतः आम भुखमरी, संसाधन समापन और पर्यावरण प्रदूषण से मानव सभ्यता का विनाश अवश्यसंभावी है। आज की दर से यदि जनवृद्धि होती गयी तो अगले 100 वर्षों में हम पृथ्वी की चरम पालन सीमा स्तर पर पहुँच जायेगें। जहाँ संसाधनों की समाप्ति के दृश्य होगें।

औद्योगिक वृद्धि की परिणति होगी और समूल मानव समाज प्रलय चक्र में विलीन हो जायेगा। पर्यावरण अवनयन तथा पर्यावरण प्रदूषण समानार्थी शब्द है दोनों का सम्बन्ध पर्यावरण की गुणवत्ता में ह्रास से होता है। जब मानवीय क्रिया–कलापों द्वारा स्थानीय स्तर पर पर्यावरण की गुणवत्ता में ह्रास होता है तो उसे पर्यावरण प्रदूषण कहते है, किन्तु जब मानवीय कार्यों तथा प्राकृतिक प्रक्रमों द्वारा स्थानीय, प्रादेशिक एवं विश्व स्तर पर पर्यावरण की गुणवत्ता का विलोपन होता है तो उसे पर्यावरण अवनयन कहते है। इस प्रकार पर्यावरण प्रदूषण सम्पूर्ण परिवेश के अवनयन का मूल कारक होता है। दास मैन (1975) के अनुसार उस दशा या स्थिति को प्रदूषण कहते है जब मानव द्वारा पर्यावरण के विभिन्न तत्वों एवं ऊर्जा का इतनी अधिक मात्रा में संग्रह हो जाता है कि वे पारिस्थितिक तंत्र द्वारा आत्मसात करने की क्षमता से अधिक हो जाते हैं। प्रदूषण वायु, जल एवं स्थल की भौतिक, रासायनिक और जैविक विशेषताओं का वह वांछनीय परिवर्तन है जो मनुष्य एवं उसके लिए लाभदायक दूसरे जन्तुओं, पौधों, औद्योगिक संस्थानों तथा दूसरे कच्चे मालों इत्यादि को किसी भी रूप में हानि पहुँचाता है।

निष्कर्ष :

मनुष्य की संस्कृति एवं सभ्यता में वस्तु विसर्जन (अवशिष्ट पदार्थ) द्वारा पर्यावरण प्रदूषण में वृद्धि होती है। विसर्जित पदार्थ तरल, ठोस, गैस इत्यादि रूपों में हो सकते हैं, जिन्हें प्रदूषक कहा जाता है। वे सभी पदार्थ और ऊर्जा प्रदूषक है जो प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से मनुष्य के स्वास्थ्य और उसके संसाधनों को हानि पहुँचाते हैं। यह मानव की वांछित गतिविधियों का अवांछित प्रभाव है। प्रदूषक एक ऐसा अवांछित पदार्थ है जो अनुचित स्थान पर, अनुचित समय पर, अनुचित मात्रा में अनावश्यक रूप से मिलता हैं। अध्ययन क्षेत्र में पर्यावरण प्रदूषण की समस्याएँ बन्द जलाशयों, पेय जल स्रोतों, गंदी नालियों, कृषि अवसाद एवं कुड़ा–कचरा, जन्य क्षेत्रों, पशुओं द्वारा अधिग्रहित स्थानों, मानव मल त्याग के क्षेत्रों, श्मशानों, खलिहानों, नदी में समाहित गंदे नालों, नदियों में विसर्जित शव, औद्योगिक कचरा, स्नान घाटों, खुले स्थानों पर परित्यक्त मृत पशुओं, ईट–भट्ठों, सांस्कृतिक कार्यक्रमों के दौरान अवांछित ध्वनियों, रसोई में प्रयुक्त ईधन, ईंट–भट्ठे से विसर्जित धुओं, रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशक दवाओं के प्रयोग इत्यादि के कारण परिलक्षित होती है। क्षेत्र में धार्मिक, सामाजिक एवं राजनैतिक विसंगतियों के कारण लड़ाई–झगड़ें एवं विवाद जन्य मानसिक प्रदूषण के भी उदाहरण मिलते है।

संदर्भ–सूची :

1. आज, हिन्दी दैनिक, 23 अगस्त 1996, वाराणसी पृष्ठ संख्या 6.
2. श्रीवास्तव, एस. सी., 1983 : जनांकिकी सिद्धान्त तकनीकी एवं अध्ययन, शिक्षा साहित्य प्रकाशन, मेरठ, तृतीय संस्करण, पृ. 21.
3. कार्वे, आर. सी., 1951 : प्रजनन–दर का समाजशास्त्र, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृ. 132.
4. खरे, बी. सी. एवं सिन्हा, बी. सी., 1985 : सामाजिक जनांकिकी एवं भारत में जनस्वास्थ्य, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृ. 180.
5. गुप्ता, एम. एल. एवं शर्मा, डी. डी, 1990 : सामाजिक विघटन, साहित्य भवन, आगरा, पृ. 12 एवं 217.
6. चौहान, श्यामसुन्दर सिंह एवं गुप्ता, एन. सी., 1995 : सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक कारकों के सन्दर्भ में भारत की बढ़ती हुई जनसख्ंया, सामाजिक लेख, प्रतियोगिता दर्पण, वर्ष 17, अंक 12, जुलाई, पृ. 1874–1875.
7. दफ्तुआर, विशाल रंजन, 1996 : जनसंख्या का बेतहाशा बे–लगाम काफिला, सामयिक लेख, प्रतियोगिता दर्पण, हिन्दी मासिक, फरवरी, वर्ष 18, अंक 7, पृ. 1098.
8. धनवन्तरी रामाराव, 1949 : परिवार नियोजन संघ, मैसूर, पृ. 78.
9. नेगी, पी. एस., 1994 : पारिस्थितिकीय विकास एवं पर्यावरण भूगोल, द्वितीय संस्करण, रस्तोगी एण्ड कम्पनी, मेरठ, पृ. 21.